बिहार लोक सेवा आयोग

(Bihar Public Service Commission)

निबंध (ESSAY)

मॉडल उत्तर

01 ''मजहब नहीं सिखाता, आपस में बैर करना''

बचपन से ही हम इकबाल के इन संदेशों/गीतों को सुनते आए हैं कि

'मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर करना'

जो कि सभी धर्मो/मजहबों की एक उदार और सहिष्णु छवि को बताता है तथा यह दर्शाता है. कि धर्म समाजों के मध्य परस्पर भाईचारे व प्रेम को बढ़ाता है।

परंतु वर्तमान में हो रहे दंगो, साम्प्रदायिक घटनाओं (गोधरा, कश्मीर दंगे, असम दंगे, करौली दंगे), आतंकवादी हमलों (अमेरिका का ट्विन टॉवर हमला, न्यूजीलैण्ड हमला, मुंबई हमला, खालिस्तानी मुद्दा) आदि को देखकर प्रायः यही तंज कसा जाता है कि

"मजहब ही सिखता है आपस में बैर करना''

उपयुक्त परिदृश्य को देखकर मन में सवाल आता है कि धर्म का वास्तविक रूप कौनसा है? यह समाज में क्या भूमिका निभाता है? और समाज में धर्म का होना आवश्यक क्यों? क्या इससे कुछ खतरे भी उत्पन्न हुए हैं?

इन सवालों का जवाब हम इस निबंध में ढूंढेंगे ।

मजहब का अर्थ है- धर्म, मत या सम्प्रदाय । शाब्दिक अर्थों में ईश्वर, पैगम्बर भगवान, आदि के प्रति श्रद्धा या विश्वास पर आधारित धारणात्मक प्रक्रिया ही धर्म है।

वैयक्ति के नैतिक विकास में, समाज के प्रति उसके दायित्व के निर्धारण में व मानवता के विकास मे धर्म ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उसने उन मानदण्डो, कसौटियों को तय किया जिसके तहत मनुष्य को सभ्य बनाया जा सके।

उदाहरणार्थ सभी धर्मो में समानता, जीव मात्र के प्रति दया, बंधुत्व यथा *'सर्वधर्मसमभाव', 'बहुजन-हिताय, सरबत दा भला'* जैसे मूल्यों का समावेशन मिलता है। इसी मजहब के महत्व पर प्रकाश डालते हुए इकबाल है कहा है कि

हमने यह माना कि मजहब से जान है, इंसान की।

कुछ इसी के दम से कायम शान है, इंसान की।।

धर्म का दूसरा पहलू है प्रेम या यूँ कहे धर्म का आधार प्रेम ही है। सूफी संतो ने सांसारिक प्रेम व ईश्वर प्रेम में कोई अन्तर नहीं माना। भक्ति परम्परा के कवियों ने भी प्रेम को ही भक्ति माना। और सभी धर्मों को मूलरूप से देखने पर हम पाएंगे कि कोई ऐसा धर्म नहीं है जो दुश्मनी/ बैर की महत्व देता हो। आदिम काल से वर्तमान तक के सफर में धर्म ने प्रेम व सद्भावना का विकास किया है। इसी संदर्भ में कबीर का भी मत है कि जो प्रेम नहीं कर सकता, वह धार्मिक नहीं हो सकता उनके अनुसार -

''यह तो घर है प्रेम का,

खाला का घर नाहि।

सीस उतारे भुईं धरे,

तब पैठे घर मांहि ।

इसी तरह धर्म बैर को नहीं अपितु परस्पर प्रेम को बढ़ाता है। समाज मे प्रेम बढ़ाने, सहिष्णुता बनाए रखने व विविधता को सुरक्षित रखने के लिए धर्म आवश्यक है क्योंकि यही सरल अर्थों मे मनुष्य को दिशानिर्देश प्रदान करता है। इन्हीं निर्देशों से प्रेरित होकर धार्मिक व्यक्ति सभी प्राणियों में उसी ईश्वर का निवास देखता है इसीलिए किसी से बैर न रखकर प्रेम करता है। तुलसीदास जी के शब्दों मे

''सियाराम मय सब जग जानी,

करहूं प्रणाम जोरि जग पानी ।''

हमने उपर्युक्त विश्लेषण से धर्म का महत्व, उसकी भूमिका व आवश्यकता को जाना । परंतु हर सिक्के के दो पहलू होते हैं। हमें आज धर्म के नाम पर होने वाले साम्प्रदायिक दंगो, आतंकवाद, असहिष्णुता की घटनाओं को अनदेखा नहीं कर सकते हैं। और तो और देश का विभाजन भी धर्म के आधार पर हुआ। साथ ही *आजादी के 75 वर्षों* के बाद भी धार्मिक दंगो की गूंज किसी न किसी स्वर में आए दिन सुनाई देती रहती है।

इसी संदर्भ में विश्लेषण करने पर हम पाएंगे कि सभी धर्मों के दो दृष्टिकोण होते हैं 'नैतिक दृष्टिकोण' व 'वर्तमान का दृष्टिकोण।'

धर्म का नैतिक दृष्टिकोण सभी धर्मों में परस्पर प्रेम, शांति, सद्भावना, सहयोग जैसे मूल्यों का समावेश करता है। वहीं धर्म का वर्तमान स्वरूप जो कि इसके बाह्य दृष्टिकोण (कर्मकाण्ड, अंधविश्वास) के दुरुपयोग से बना है। ,

लोग धर्म का अपने स्वार्थ के चलते राजनीतिक दुरुपयोग, हिंसा, साम्प्रदायिकता फैलाने में करते हैं। जिसके कारण यह प्रेम का जरिया न बनकर बैर / द्वेष का साधन बन जाता है। यहाँ कमी धर्म में न होकर उसके दुरुपयोग में है।

''एक जैसी दिखती थी माचिस की तीलियाँ

किसी ने दिए जलाए तो किसी ने घर''

अत: धर्म 'अफीम का नशा' न बने इसके लिए आवश्यक है कि इसका दुरुपयोग न हो व धर्म में नैतिकता का समावेशन बना रहे। जिस तरह आत्मा के शरीर में प्रवेश से मनुष्य में स्फूर्ति का संचार होता है वहीं नैतिकता युक्त धर्म से समाज में प्रेम का संचार संभव होगा। स्वामी विवेकानंद के शब्दों में-

'धर्म ही हमारे राष्ट्र की जीवन शक्ति

है। यह शक्ति जब तक सुरक्षित है,

तब तक विश्व की कोई भी शक्ति

हमारे राष्ट्र को नष्ट नहीं कर सकती है।'

02 ''मन के हारे हार है, मन के जीते जीत''

प्रांजल पाटिल जब 6 साल की थी तो उनकी एक आँख एक हादसे में खराब हो गई थी। इस हादसे से उभरने से पहले ही उनकी दूसरी आँख की रोशनी भी चली गई थी। लेकिन नेत्रहीन होने के बावजूद भी उन्होंने कभी सपना देखना नहीं बंद किया। उन्होंने देश की सबसे कठिन परीक्षा को क्रेक करने का मन बनाया और तमाम कठिनाइओं के बावजूद अपनी मंजिल पाई और IAS अधिकारी बनकर दिखाया । यह उनके मनोबल अर्थात मन की शक्ति की ही जीत थी। तभी तो शंकराचार्य जी ने कहा है-

''जिसने मन को जीत लिया, उसने जगत को जीत लिया।''

इस निबंध में हम मन के महत्व को जानेंगे। कैसे यह हमारे कार्यों के परिणाम का निर्धारण करता है? क्यों मनोबल का होना जरूरी है? किस तरह मनोबल ने विभिन्न व्यक्तियों को पहचान दी ? मना की शक्ति को कैसे जागृत की जाए?

इन आयामों को जानने में हम सबसे पहले विचार करते हैं कि कैसे मन मनुष्य को प्रेरित करने में महत्व रखता है।

मनुष्य की समस्त जीवन प्रक्रिया का संचालन उसके मस्तिष्क द्वारा होता है। मन व मस्तिष्क प्रत्यक्ष रूप से जुड़े होते हैं। मन में हम जिस प्रकार का विचार रखते है हमारे शरीर व मस्तिष्क भी उसी अनुरूप ढल जाता है। यथा यदि हमारे मन में निराशा या हीन भावना है तो हमारा शरीर भी शिथिल रहता है। वहीं आशावादी मन होने पर हमारे भीतर स्फूर्ति व सकारात्मकता का संचार रहता है। इसी मनस्थिति के बारे में कवि मैथलीशरण गुप्त ने कहा है-

''नर हो, न निराश करो मन को
कुछ काम करो, कुछ काम करो''

इसी संदर्भ में हम आगे विचार करने पर पाएंगे कि जब हम मन में हार मान लेते है तो किसी कार्य को शुरू करने की व निरंतर प्रयास करने की कोशिश ही नहीं करते। वहीं अगर हम किसी कार्य को करने की मन मे ठान लेते है तो लाख मुश्किलें आने के बावजूद हम ऊर्जा के साथ निरंतर प्रयास करते रहते हैं और यही प्रयास हमें सफलता रूपी विजय प्रदान करता है। महात्मा गांधी ने इस मनोबल के कारण ही कभी किसी परिस्थिति में हार नहीं मानी । और इसी कोशिश के लिए कहा गया है-

''लहरों से डरकर नौका पार नहीं होती,
कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती''

इसी क्रम मे यह भी विचारणीय है कि मनुष्य की हार व जीत उसके मनोयोग पर ही आधारित होती है। कमजोर मानसिकता वाले लोग रस्सी को भी साँप समझकर भयभीत हो जाते हैं व हार मान लेते हैं, वहीं दृढ़ मनोयोग वाले व्यक्ति साँप को भी रस्सी जैसी मामूली वस्तु समझकर उसका सामना करते हैं व जीत हासिल करते हैं।

इसी मनशक्ति का उदाहरण हम महाभारत में भी देख सकते हैं। जब अर्जुन युद्ध करने से पहले चिंतन व डर में डूब गए थे तब श्रीकृष्ण ने ही उनके मनोबल को बढाया और इसी मनोबल के सहारे ही वे इस युद्ध मे वीरता के साथ लड़ सके। इस तरह हम कह सकते हैं कि जीवन में सफलता हेतु एक दृढ़ मनोबल जरूरी है। तभी तो मनुष्य जीवन में अनेक विविधता (सुख-दुख, आशा-निराशा, जय-पराजय) होने के बावजूद हर परिस्थिति एक सशक्त मन की आवश्यकता हर समय बनी रहती है क्योंकि

'जो भी परिस्थितियाँ मिलें,

काँटे चुभे कलियाँ खिलें,

हारे नहीं इंसान,

है संदेश का जीवन का यही।''

इसी संदर्भ में मन शक्ति के उदाहरण हमें विभिन्न महान व्यक्तित्व में देखने को मिलते है। महात्मा गांधी से लेकर नेल्सन मंडेला तक, सावित्री से लेकर मीरा तक, आइन्सटीन से लेकर अब्दुल कलाम तक, रानी झाँसी से लेकर इन्दिरा गांधी तक एक चीज जो सबमें समान मिलती हैं वह है इनका दृढ मनोबल । इसी मनोबल के सहारे इन्होंने सफलता को प्राप्त किया।

हमने मन के महत्व को तो जान लिया लेकिन यह भी जानना होगा कि मन में जीत की भावना लाई कैसे जाए? अर्थात मन को सशक्त कैसे किया जाए?

इसके लिए आवश्यक है कि मन मे हीनता की भावना को खत्म करना। जब व्यक्ति यह सोचता है कि मैं अशक्त हूँ, कमजोर हूँ तब उसका मन से भी कमजोर हो जाता है और वह किसी कार्य को शुरु ही नहीं कर पाता। है अतः मन में आई इसी हीनता को ही व्यागने की आवश्यकता है। एक बार मन को सशक्त करके लेने से हम अपने सपनों को साकार कर लेने में सक्षम हो सकेंगे। तभी तो कहा गया है–

'दुख-सुख सब कहं परत हैं,

पौरुष तजहूँ न मीत।

मन के हारे हार है,

मन के जीते जीत।।

KGS

03 ''कर्म करें, फल की चिंता न करें''

''कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।''

भगवद्गीता का यह प्रसिद्ध श्लोक कर्म की महत्ता को दर्शाता है। यह बताता है कि हमें अपने कर्मों को बिना किसी फल की इच्छा किए निरंतर करते रहना चाहिए। भगवद्गीता का सार हो या कांट का *'कर्त्तव्य के लिए कर्तव्य की अवधारणा'* हो; या कर्मयोग का अर्थ हो सभी बिना किसी फलासक्ति के निरंतर अपने कर्तव्य को पूरा करने के लिए कर्म करने की प्रेरणा देते हैं।

इस निबंध में हम कर्म की इसी अवधारणा के संबंधित विभिन्न जैसे की दृष्टिकोणों पर विचार करेंगे जैसे कि क्यों हमें कर्म करते समय फल की इच्छा नहीं रखनी चाहिए। इच्छा के साथ कर्म करने के क्या परिणाम होंगे ? क्या कुछ ऐसी भी स्थितियाँ है जहाँ हम फल (परिणाम) के संबंध में उचित चिंतन करना चाहिए ।

सर्वप्रथम हम यह जानने का प्रयास करेंगें कि क्यों हमें कर्म करते समय फल की चिंता नहीं करनी चाहिए। जो व्यक्ति कर्म को अपना कर्तव्य समझ कर कर्म करते हैं वे तनाव मुक्त रहते हैं तथा कार्य करने में अपना शत-प्रतिशत लगाते हैं। वहीं जो व्यक्ति कर्म करते समय भी फल की चिंता करते हैं वे प्रायः तनाव में रहते हैं क्योंकि उनका सम्पूर्ण ध्यान फल के ईर्द-गिर्द रहता है तथा फल न मिलने की निराशा या फलप्राप्ति के प्रति अतिउत्साह दोनों उसकी कार्यक्षमता को प्रभावित करते हैं।

इसके साथ ही यह जानना भी रोचक है *'कर्मप्रधानता'* का यह संदेश जितना आदिकाल में प्रासंगिक था उतना आज भी है वर्तमान समय में भी कर्म की महत्ता बनी हुई। बहुत से लोग सिर्फ परिणाम की इच्छा व परिणाम के सुखद स्वप्न में लीन रहते हैं परंतु उसके लिए पर्याप्त कर्म नहीं करते। यथा प्रसिद्ध 'बिल्ली व मछली' की कहानी में बिल्ली मछली को खाना तो चाहती है परंतु अपने पैर गीला नहीं करना चाहती। जबकि वास्तव में हमे निरंतर कर्म करते रहना चाहिए। अंतत फल भी हमारे कर्मों पर ही निर्भर करता है। हमारे कर्म कैसे रहेंगे उसी पर ही परिणाम निर्धारित होगा अतः चिंता फल की न करके कर्म

करने की होनी चाहिए। तुलसीदास जी के शब्दों में-

''करम प्रधान विश्व रचि राखा।

जो जस करइ सो तस फल चाखा।''

इस तरह हमने बिना फल किए कर्म किए जाने का महत्व समझा। अभी यह जानेंगे कि फल की चिंता के साथ कर्म करने पर क्या दुष्परिणाम हो सकते हैं।

यदि हम किसी फल की चिंता के साथ कर्म करते हैं तो उसमें निश्चित ही स्वार्थ का तत्व भी समाहित हो जाता है। और कई बार व्यक्तिगत स्वार्थ को देखते कर्म भी उसी के अनुरूप करते हैं। वहीं बिना किसी फल की चिंता किए, कर्म करने से समाज के प्रति दायित्व भी उचित रूप से पूरे होते हैं। यथा एक सिविल सेवक बिना किसी लाफ लाभ की आशा किए अपने कर्तव्यों को पूरा करता है तो इसका लाभ सम्पूर्ण समाज को मिलता है वहीं निजी लाभ की चिंता करके किया गया। कर्म प्रायः समाज के संदर्भ में संगत नही रहता है।

हर सिक्के के दो पहलू होते हैं । यह सही है कि हमें फल की चिंता किए बिना निरंतर कर्म करते रहना चाहिए।

परंतु कुछ निर्णय करने से पहले उसके परिणाम के प्रति चिंतन करना भी जरूरी होता है यथा कोई फल किसी के प्रति हानि तो नहीं देगा। अर्थात हमारे कर्म और कर्म का फल दोनो ही उचित होने चाहिए। इस संबंध में (फल) परिणाम का उचित विश्लेषण भी होना चाहिए।

महात्मा गांधी का 'साधन- साध्य की पवित्रता' का सिद्धान्त भी इसी दृष्टिकोण को बताता है। जिसके तहत हमें हमारे कर्मों व उनके द्वारा प्राप्त फलों (परिणामों) का उचित विश्लेषण करना चाहिए। इसी तरह *मैक्यावेली, मार्क्स* इत्यादि ने परिणाम संबंधी पक्ष के चिंतन को भी महत्वपूर्ण माना है।

इस तरह हम सभी पक्षों पर विचार करें तो यह पाएंगे कि फल/परिणाम के संबंध में विश्लेषण करना उचित है परंतु एक बार निर्णय लेना के पश्चात हमें अपने कर्मों पर ध्यान देना चाहिए। परिणाम क्या रहेगा यह अंततः हमारे कर्म ही निर्धारित करेंगे । अतः व्यर्थ रूप से फल की चिंता किए बिना अगर कर्म करेंगे तो सफलता की संभावना अधिक होगी। साथ ही किसी भी परिणाम (अच्छे बुरे) को सहृदय स्वीकारने की क्षमता भी होगी। तभी तो कहा गया है-

''चराति चरतो भगः'' अर्थात् ''चलने वाले का भाग्य चलता है।''

KGS

04 ''अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत''

''समय चूँकि पुनि का पछताना

का बरखा जब कृषि सुखाना।''

तुलसीदास जी द्वारा रचित उपर्युक्त पक्तियाँ समय के महत्व व सामर्थ्य को बताती हैं। अर्थात किसी भी घटना/ स्थिति/ व्यक्तित्व आदि का मूल्यांकन समय सापेक्ष होता है। यदि हम समय रह रहते किसी कार्य को नहीं करते तो सिवाय पछताने के हमारे पास कुछ शेष नहीं रहता ।

जिस तरह फसल पकने के समय उसकी उचित रखवाली न की जाए तथा जब सम्पूर्ण फसल समाप्ति के पश्चात, सिर्फ अफसोस करने के अलावा कुछ नहीं बचता उसी तरह किसी भी कार्य को उचित समय पर न करने के कारण हमें उसके दुष्परिणामों के अतिरिक्त कुछ नहीं मिलता।

हम निबंध को इसी परिप्रेक्ष्य में विभिन्न उदाहरणों के माध्यम से विश्लेषित करने का प्रयास करेंगे। कि समय के दुरुपयोग के क्या दुष्परिणाम है? क्यों मनुष्य समय के महत्व को जानते हुए भी उसका उचित प्रयोग नही कर पाता? इस प्रवृत्ति को कैसे टला जाए?

चूंकि समय मनुष्य के जीवन की सबसे मूल्यवान वस्तु है। एक बार वक्त बीत जाने पर वह कभी वापस नहीं आता । समय के महत्व को न समझने के कारण ही विभिन्न सभ्यता, समाज, प्रतिभा समाप्त हो गई। क्योंकि उचित समय बीत जाने के पश्चात हमारे पास कुछ नहीं बचता। जिस तरह पूरे साल पढ़ाई न करने के बाद परीक्षा हॉल में सिवाय पछताने के अलावा कुछ नहीं मिलता, उसी तरह समय बीत जाने के बाद हाथ मलने के अलावा कुछ भी नहीं बचता। तभी तो कहा गया है-

''समय इंसान को सफल नहीं बनाता,

बल्कि समय का सही इस्तेमाल इंसान को सफल बनाता है ।''

हमने यह तो जान लिया कि समय पर किसी कार्य करने का महत्व क्या है। परंतु यह पता होते हुए कि समय कितना महत्वपूर्ण है, मनुष्य इसकी बर्बादी क्यों करता है? समय की बर्बादी का सबसे बड़ा कारण है आलस्य । साथ ही किसी काम को 'कल' के लिए टाल देने की प्रवृत्ति। इसी कारण मनुष्य किसी कार्य उचित समय पर कर नहीं पाता और अंत मे सभी कार्य एक साथ आकर उसके बोझ व जोखिमों को बढ़ा देते हैं।

यथा वर्तमान में प्रदुषण की स्थिति हमारी प्रकृति को अनदेखा करने की, व भविष्य में निपटने की सोच के कारण ही है। IPCC की रिपोर्ट भी इन्हीं तथ्यों को उजागर करती है। कबीरदास के शब्दो में -

'' काल करै सो आज कर,

आज करै सो अब ।

पल में प्रलय होएगी, बहुरि करेगा कब ।।''

ऐसा ही उदाहरण हम वर्तमान में कोविड के भीषण प्रकोप के संदर्भ में भी देख सकते हैं। यदि समय रहते हमने अपनी अवसंरचना में उचित निवेश किया होता तो इसकी भीषणता को कम किया जा सकता था। वर्तमान में इसी संदर्भ को देखते हुए उचित कदम उठाए जा रहे हैं।

इसी तरह तालिबान का मुद्दा हो या अतंकवाद का, जलवायु परिवर्तन का मुद्दा हो या वैश्विक मंदी का सब कहीं न कहीं समय उचित समय पर कार्यवाही न करने के ही परिणाम हैं। शेक्सपीयर के शब्दों में-

''मैने समय को बर्बाद किया और अब समय मुझे बर्बाद कर रहा है।''

हमने समय के महत्व, उसकी बर्बादी के के दुष्परिणाम व उसके बर्बादी कारणों को तो जान लिया। परंतु चिंतन का एक बिंदु यह भी है कि समय का उचित उपयोग कैसे किया जाए?

समय के सदुपयोग हेतु सर्वप्रथम हमे अनुशासित होकर नियमित रूप से अभ्यास करने की आवश्यकता है। साथ ही किसी कार्य को समय पर पूरा करने की प्रतिबद्धता रखना आवश्यकता है। पीटर ड्रकर के अनुसार 'समय सबसे कम पाया जाने वाला संसाधन है, और जब तक इसका अच्छा प्रबंधन नहीं किया जाता है, तो बाकी किसी चीज का प्रबंधन नही किया जा सकता है।' अत: हमें अपने काम को 'कल' के लिए टालने की प्रवृत्ति से बचते हुए, अपनी प्राथमिकताओं को तय करके समय रहते सभी कार्यों को कर लेना चाहिए। जिस तरह प्रकृति में हर चीज (दिन-रात) की नियमितता है हमारे कार्य करने की प्रवृत्ति में भी नियमितता होनी चाहिए। साथ ही उचित समय पर कार्य करने की तत्परता भी। ऐसा करने पर हमारे सामने पछताने की स्थिति उत्पन्न ही नहीं होगी। कबीरदास जी के ही शब्दों में-

''दु:ख में सुमिरन सब करे
सुख में करै न कोय''
जो सुख में सुमिरन करे
दु:ख काहे को होय ।।''

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि समय को बर्बाद करने के फलस्वरूप हमें पछताना पड़ता है वहीं समय का सदुपयोग हमें सफलता की सीढी चढ़ाता है। हमारी सफलता व कार्य पूरा होने की शर्त हमारे समय पर कार्य करने की प्रवृत्ति पर ही निर्भर है। महात्मा गांधी के शब्दों में -

''भविष्य इस बात पर निर्भर करता है,
कि आप आज क्या करते हैं।''